International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 8 Issue 2, March-April, 2020, Impact Factor: 5.246

गांधी के दार्शनिक एवं शिक्षा संबंधी विचारों की वर्तमान परिपेक्ष्य में साथर्कता और उनका तुलनात्मक अध्ययन

बृजेश सिंह यादव

शोधार्थी, डिपार्टमेंट ऑफ़ एजुकेशन, राधा गोविन्द विश्वविद्यालय, रामगढ़ झारखण्ड

प्रस्तावना

किसी भी समाज में शिक्षा, समाजीकरण, सामाजिक नियंत्रण, व्यक्तित्व निर्माण तथा मानव संसाधन के सृजन का अत्यन्त महत्वपूर्ण उपादान और सामाजिक–आर्थिक विकास की सूचक होती है। बदलते सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य को ध्यान में रखकर भारत में शिक्षा प्रणाली की पृष्ठभूमि, उद्देश्य, चुनौतियों तथा संकट पर वस्तुपरक ढंग से विचार करने की आवश्यकता है। भारत की वर्तमान शिक्षा–प्रणाली ब्रिटिश प्रतिरूप पर आधारित है। जिसकी नींव सन् 1935 में रखी गयी थी। लार्ड विलियम बैंटिक ने छः वर्ष पूर्व ही यह घोषित कर दिया था कि भारत में अंग्रेज सरकार की नीति प्रशासन को अंग्रेजी भाषा के माध्यम से चलाना है। बाद में लार्ड मैकाले ने अपनी मशहूर टिप्पणी में यह तर्क दिया था कि, "अंग्रेजी शिक्षा से भारत में प्रशासन को बिचौलियों की भूमिका निभाने और दफ्तरी कार्य के लिए एक ऐसे वर्ग को तैयार करना है तो रक्त और रंग में तो भारतीय हों लेकिन अपनी रुचि, विचार, नैतिकता तथा बुद्धि में पूरी तरह अंग्रेज हों।"[1]

अंग्रेजी शिक्षा–प्रणाली से आक्रान्त और क्षुब्ध होकर महात्मा गाँधी ने 22–23 अक्टूबर 1937 को वर्धा में एक राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन बुलाया जिसमें अनेकों शिक्षा – शास्त्रियों, राष्ट्रीय नेताओ तथा समाज सुधारकों ने भाग लिया । इस सम्मेलन को 'वर्धा शिक्षा सम्मेलन' के नाम से भी जाना जाता है। इसी सम्मेलन में महात्मा गांधी ने देश की वर्तमान शिक्षा–पद्धति को देश के अनुरूप न बताते हुए बुनियादी शिक्षा की अपनी योजना प्रस्तुत की। उनके शब्दों में देश की वर्तमान शिक्षा–पद्धति किसी भी तरह देश की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर सकती है। इस शिक्षा के द्वारा जो भी लाभ होता है, उससे देश का प्रमुख वर्ग वंचित रह जाता है अतः प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम कम से कम सात साल का होना चाहिए। जिसके द्वारा मैट्रिक तक का ज्ञान दिया जा सके, परन्तु इसमें अंग्रेजी के स्थान पर कोई अच्छा शिल्प जोड़ दिया जाए। सर्वांगीण विकास के उद्देश्य से सारी शिक्षा जहाँ तक हो किसी उद्योग के माध्यम से दी जाए, जिससे पढ़ाई का खर्च भी पूरा हो सके। जरूरी यह है कि सरकार उन बनायी गयी चीजों को राज्य द्वारा निश्चित की गई कीमत पर खरीद ले।

मोहन दास कर्मचन्द गांधी एक धर्मनिष्ठ राजपुरुष थे, जिन्होंने अपनी जीवन दृष्टि को गहन अध्ययन एवं कर्म द्वारा क्रमशः विकसित किया। अपनी इस जीवन दृष्टि के अनुरूप उन्होंने भारतीय समाज को एक सम्यक् और सन्तुलित रूप देने का संकल्प बनाया। मानव जीवन का कोई ऐसा पक्ष नहीं है, जिसकी ओर गांधीजी का ध्यान न गया हो। गांधीजी कोई उपदेशक या मत पंथ के प्रवर्तक नहीं थे। उन्होंने तो अपनी दैनिक दिनचर्या को इस प्रकार ढाला कि वह व्यवहारिकता के चरम पर पहुँचकर लोगों को आज भी प्रेरित और अनुप्राणित कर रही है। मनुष्य के बीच सह–अस्तित्व का प्रचार–प्रसार परिविस्तार समाज में सर्वप्रथम गांधी जी ने ही दिया। तथा

गांधी जी के हर क्षेत्र की कार्य–प्रणाली उनके जीवनदर्शन का प्रतिनिधित्व करती थी। जीवन दर्शन के रूप में वह सत्य एवं अहिंसा के अनूठे पुजारी थे। उन्होंने ईश्वर को सदैव एक सत् की सत्ता के रूप में स्वीकार किया है। उनका मानना है कि सत् का अभिप्राय अस्तित्व भी है। अतएवं सत्य के बिना किसी भी वस्तु का अस्तित्व सम्भव नहीं है। उनका मानना था कि प्रत्येक जीवधारी में ईश्वर का निवास होता है और हम प्रयास करके जीवधारी में निहित उस ईश्वर को पहचान भी सकते हैं परन्तु हमारा यह प्रयास प्रेम पर आधारित होगा, तभी हम सफलता की ओर उन्मुख होंगे। प्रेम ही वह अनुभूति है जो मनुष्य को एकता के सूत्र में बांधती है और जगत के समस्त प्राणियों के साथ एकात्मीयता ही अंहिसा है, जिसे हम सत्य का व्यवहारिक रूप कह सकते हैं। वास्तव में यदि हम सत्य को प्राप्त करना चाहते हैं तो हमें साधन के रूप में अहिंसा का सिद्धांत अपनाना होगा। उनकी अंहिसा का तात्पर्य सिर्फ इतना ही नहीं है कि किसी का वध नहीं किया जाए, वरन् गांधी जी की अहिंसा का अर्थ है– बुरे तथा निरर्थक विचार मन में न लाना, द्वेष, ईर्ष्या, घृणा आदि से दूर रहना, अशुभ चेतना से परे रहना, आवश्यकता से अधिक वस्तु संग्रह न करना, शोषण का तिरस्कार करना व किसी को अनावश्यक रूप से न डराना ।

इसके अतिरिक्त निर्भयता तथा सत्याग्रह भी गांधी जी के जीवन दर्शन के मूल सिद्धांत थे। उनके अनुसार निर्भयता का अभिप्राय है जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्ति निर्भयता के साथ काम कर सके और विपति के आने पर निर्भीकता के साथ उसका अनुपालन कर सके। सत्याग्रह का तात्पर्य है– जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में व्यक्ति सत्य की दिशा में किये गए निर्णय पर अडिग रह सके। जो व्यक्ति सत्य पर अडिग रहता वह जीवन में सफलता की ओर उन्मुख होता है।

विचार एवं व्यवहार में एक रूप गांधी जी ने सम्पूर्ण शिक्षा का केन्द्र नीति शास्त्र व मूल्यों को माना। उनका विश्वास था कि शिक्षा मनुष्य का विकास करके उसका चरित्र निर्माण करती है और यह दोनों ही मनुष्य को ईश्वरीय ज्ञान और आत्म–बोध की ओर उन्मुख करने में सहयोग देते हैं। शिक्षा का कार्य है मनुष्य की आत्मा का परिमार्जन करना, चूँकि आत्म–संस्कार के बिना सभी प्रशिक्षण हानिकारक व व्यर्थ हो सकते हैं। उनके अनुसार वास्तविक शिक्षा मुक्ति देने में सहायक होती है।

भारत की नई पीढ़ी में महात्मा गांधी के विचारों के प्रति अविश्वास की भावना देखी जा रही है। तथा यह भी • सुनने को मिलता है कि बदलते परिवेश में अब उनके विचार प्रासंगिक नहीं रहे। वस्तुतः इसके लिए युवा पीढ़ी को ही दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि गांधी जी के विचारों का उतना प्रचार–प्रसार नहीं किया जा सका जितना वह अपरिहार्य, अपेक्षित एवं प्रासंगिक है। अतः आज के बदलते परिवेश में गांधी जी की प्रासंगिकता का अध्ययन करना एवं उनके शिक्षा– सिद्धान्तों को अपनाना कितना आवश्यक हो गया है, उसका अवलोकन करना ही हमारा उद्देश्य है। शिक्षा के सभी बिन्दुओं पर हम गांधी जी की प्रांसगिकता का मूल्यांकन करना आवश्यक समझते हैं। किसी समाज में शिक्षा, सृजन एवं शक्ति का पुंज होती है। यह समाजीकरण, सामाजिक नियन्त्रण, परिवर्तन, व्यक्तित्व निर्माण एवं मानव निर्माण के सृजन के महत्वपूर्ण उपादान और सामाजिक–आर्थिक विकास का सूचक होती है। वास्तव में सही अर्थ भी यही होता है परन्तु आज की शिक्षा का अर्थ येन–केन प्रकारेण संस्थानों में नामांकन एवं डिग्री प्राप्त करना हो गया है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था से न तो व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है और न ही राष्ट्र का। ऐसे परिवेश में महात्मा गांधी के शिक्षा संबंधी विचार आज भी अत्यन्त प्रासंगिक लगते हैं। महात्मा गांधी ने शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है कि–शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक या व्यक्ति के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वोत्कृष्ट एवं सर्वांगीण विकास से है। गांधी जी के शिक्षा संबंधी विचार आज भी अत्यन्त प्रासंगिक है जिसमें बालक के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास को स्वीकार किया गया है।

भारत एक प्रजातान्त्रिक देश है। प्रजातन्त्र की सफलता यहाँ के श्रेष्ठ नागरिकों पर निर्भर करती है। श्रेष्ठ नागरिकों का निर्माण करना शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य होना चाहिए। क्या वर्तमान में शिक्षा के उद्देश्य ऐसे नागरिक का निर्माण करने में सक्षम है? वर्तमान परिवेश को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी शिक्षा के कोई उद्देश्य ही नहीं हैं। व्यक्ति के चरित्रिक एवं नैतिक गुणों का निरन्तर ह्रास हो रहा है। भ्रष्टाचार, अन्याय, बेरोजगारी दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति को रोकने के लिए गांधी जी द्वारा बताए गए शैक्षिक सिद्धान्तों जैसे– बालक का सर्वांगीण विकास करना, राष्ट्रीयता की उच्च भावना का विकास करना, भारतीय संस्कृति को विकसित करना, शोषणरहित समाज की स्थापना करना, सत्य, अहिंसा एवं सद्भावना को व्यक्ति में विकसित करना, स्वज्ञान तथा आत्मज्ञान की प्राप्ति करना, हस्तकौशल द्वारा जीवन की प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता उत्पन्न करना, आत्मनिर्भर बनाना, सामाजिक वर्ग भेद का उन्मूलन कर प्रेम एवं सहयोग पर आधारित जन – तन्त्र पद्धति को सफल बनाना, क्रिया प्रधान शिक्षण के माध्यम से श्रम के महत्व को समझाना, विद्यालय, घर एवं समाज के जीवन में सामंजस्य स्थापित करना आदि को अपनाकर ही हम बदलते परिवेश की चुनौतियों का समाधान कर सकते हैं।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम पर भी यदि दृष्टिपात किया जाए तो उसमें पर्याप्त दोष दिखाई देते हैं। पाठ्यक्रम उन सभी क्रियाकलापों का समूह होता है जिसे विद्यार्थी तथा शिक्षक एक साथ मिलकर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आयोजित करते हैं। परन्तु वर्तमान शिक्षा के पाठ्यक्रम अव्यवहारिक तथा बस्तों के बोझ को बढ़ाने वाले अधिक दिखाई देते हैं अपेक्षाकृत श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण के। आज की बढ़ती हुई बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, बेईमानी, अनैतिकता के लिए कहीं न कहीं हमारे पाठ्यक्रम भी दोषी हैं। वर्तमान पाठ्यक्रम अत्यन्त कठोर होने के नाते पुस्तकीय ज्ञान एवं रटने पर बल देते हैं, जिससे बालकों की मौलिकता तो समाप्त होती रही है, साथ ही साथ उनका सर्वांगीण विकास भी नहीं हो पता। गांधी जी पाठ्यपुस्तकों की अधिकता के सर्वथा विरोधी थे उनका मानना था कि बालक की वास्तविक पाठ्यपुस्तक तो उसका अध्यापक होता है। इसी संबंध में गांधी जी लिखते है कि, "अगर मैं शिक्षकों को समझा सकूं तो पाठ्यपुस्तकें केवल अध्यापकों के लिए ही रखूँ ।"[2] उनका मानना था कि बालकों को बचपन से ही पाठ्यपुस्तकों का गुलाम बनाकर उन पर अनावश्यक पुस्तकों को खरीदने का बेकार बोझ बढ़ाया जाता है और अत्यधिक पाठ्यपुस्तकों के बोझ से बालकों की मौलिकता समाप्त हो जाती है। गांधी जी के पाठ्यपुस्तक संबंधी विचार आज के बदलते परिवेश में अत्यन्त ही प्रासंगिक लगते हैं क्योंकि हम शुरू से ही बच्चों को अनावश्यक दबाव में रखकर उनकी स्वतन्त्र सोच, सर्वांगीण विकास और मौलिकता को समाप्त कर देते हैं। गांधी जी का मंतव्य था कि प्राथमिक कक्षाओं से ही बालकों को कुछ ऐसी चीजें सिखायी जाएं जिससे वे कुशलता प्राप्त करें तथा जो उनके मनोनुकूल हो। इसी आधार पर उन्होंने पाठ्यक्रम क्राफ्ट शिक्षा को स्थान दिया। क्राफ्ट शिक्षा लेकर विद्यार्थी उच्च माध्यमिक स्तर पर जाएगा जहाँ से जीवन की धारा का निर्माण होता है, उसके लिए बहुत उपयोगी साबित होगी। इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर क्राफ्ट शिक्षा को पाठ्यक्रम में रखा गया। उन्होंने यह प्रावधान किया कि हमारे नौनिहालों के हाथों, जो मोटे और भद्दे सामान बनेंगे उसको समाज एवं सरकार अधिकतम मूल्य देकर क्रय करेंगे, इस गर्व के साथ, कि हमारे बालकों ने यह सामान बनाया है। लेकिन इसका उल्टा हुआ, हमारा समाज गाँधी जी के विचारों का अर्थ नहीं समझ सका आज एक बार फिर गांधी जी की ही बातों को व्यावहारिक शिक्षा नाम देकर भारतीय सरकार इसे लागू करने का प्रयास कर रही है ।

आज हम अगर शिक्षण विधियों पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि अधिकाशतः शिक्षण कार्यों में व्याख्यान विधि का ही प्रयोग होता है जिसमें छात्र श्रोता और शिक्षक वक्ता होता है। छात्र निष्क्रिय होकर शिक्षक की बातों को सुन लेता है तथा शिक्षक भी कक्षा कक्ष में वक्तव्य देकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेता है। उपर्युक्त प्रचलित शिक्षण विधि से शिक्षण अप्रभावी हो जाता है जिससे छात्रों का अधिगम स्तर उच्च होने के बजाए उनमें विषयवस्तु को रटने एवं प्रत्याशित उत्तरों को याद कर लेने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। आज की इस अप्रभावी शिक्षण विधि का समाधान करने के लिए निःसंदेह महात्मा गांधी की क्रिया – प्रधान शिक्षण विधि को अपनाना प्रासंगिक होगा। महात्मा गांधी ने अपनी शिक्षण – विधि को मनोवैज्ञानिक आधारों पर विकसित किया

था। गांधी जी के अनुसार 'करके सीखना' एवं 'स्वयं अनुभव करके सीखना ही उत्तम सीखना होता है। गांधी जी रचनात्मक विधि, खेल–खेल में सीखना, अनुभव विधि द्वारा शिक्षण, अनुकरण विधि द्वारा शिक्षण, सह–संबंध द्वारा शिक्षण, स्वाध्याय, चिन्तन, मनन आदि शिक्षण विधियों के पक्षधर थे। जो आज भी बालकों के सर्वांगीण विकास में सहायक हैं तथा इन विधियों को अपनाने में आज भी गांधी जी के विचारों की प्रासंगिकता बनी हुयी है।

अध्ययन का महत्त्व

शिक्षक समाज का निर्माता होता है और वहीं शिक्षण का मुख्य बिन्दु भी होता है अतः आज के बदलते परिवेश में शिक्षक के भी आचार विचार एवं व्यवहार पर विचार करना आवश्यक है। आज का शिक्षक शिक्षण कार्य को व्यवसाय के रूप में अपनाता है न कि सेवा – भाप के रूप में शिक्षकों का चारित्रिक एवं नैतिक स्तर दिन–प्रतिदिन गिरता जा रहा है। हालाँकि आज की इस व्यवस्था के लिए सिर्फ शिक्षक समुदाय को ही जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि शिक्षक को भी आज के समाज में यह सम्मान नहीं मिल रहा है जो प्राचीन काल में मिला करता था। आज शिक्षक अपने को समाज में उपक्षित महसूस कर रहा है। इन सारी व्यवस्थाओं के बावजूद अन्ततः दोष शिक्षक के सिर पर ही जाता है। अतः शिक्षक के चारित्रिक एवं नैतिक उत्थान के लिए गांधी जी के बताए गए शिक्षकों के आचरण एवं व्यवहार को अपनाना आज की महती आवश्यकता बन गयी है। गांधी जी के अनुसार– शिक्षकों को अपने विषय का पूर्ण ज्ञाता एवं चरित्रवान, क्षमाशील, मृदुभाषी, मिलनसार, कर्तव्य परायण, विनोद प्रिय तथा श्रमी होना चाहिए। उनके अनुसार अध्यापकों में विद्यार्थियों की रुचियों योग्यताओं क्षमताओं मनोभावों आदि को परखने की क्षमता होनी चाहिए। गांधी जी ने अपनी शिक्षा योजना में शिक्षक की भूमिका को एक मित्र, सहायक तथा पथ–प्रदर्शक के रूप में स्वीकार किया है। इसके अतिरिक्त शिक्षको को विद्यार्थियों के साथ स्नेह एवं प्रेम का व्यवहार करना चाहिए। जिससे विद्यार्थी उन पर विश्वास कर सके। निश्चित रूप से बदलते परिवेश में ऐसे ही शिक्षकों की आवश्यकता है जिनकी संकल्पना गांधी जी ने अपनी शिक्षा व्यवस्था में रखी थी। अतः स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि शिक्षा के महत्वपूर्ण अवयव शिक्षक के लिए भी गांधी जी के शिक्षा दर्शन की महती प्रासंगिकता है। आज के बालक कल के भावी नागरिक हैं। अत

प्रजातन्त्र की सफलता के लिए बालकों ने स्वतन्त्रता, समानता न्याय, भातृत्व, विश्व बन्धुत्व, सत्य अहिंसा तथा नैतिकता आदि के गुणों को विकसित किया जाना आवश्यक है। परन्तु आज के बदलते परिवेश में इसके विपरीत स्थिति ही देखने को मिलती है। आज के छात्रों में असंतोष पचाई में अरुचि अनैतिकता, अराजकता तथा अनुशासनहीनता आदि दुर्गुणों का विकास हो रहा है। गांधी जी विद्यार्थी वर्ग में बढ़ती हुई अश्रद्धा से बहुत दुःखी रहते थे। गांधीजी प्राचीन गुरुकुलों, आश्रमों की गांति विद्यार्थी को विद्याभ्यास के लिए ब्रह्मवारी होना आवश्यक मानते थे। ये विद्यार्थियों में स्वावलम्बन की भावना एवं श्रम के महत्व पर विशेष बल देते थे। गांधी जी बालकों के सर्वांगीण विकास के पक्षधर थे। उनके अनुसार विद्यार्थियों में शारीरिक बल आत्मबल एवं बौद्धिकमल होना चाहिए तभी वे स्वतन्त्र कार्यकर्ता के रूप में अपना कर्तव्य निभा सकते हैं। उनका मानना था कि विद्यार्थियों में शिक्षा द्वारा संयम अनुशासन, चरित्र, विनय, समाजसेवा देशप्रेम, स्वावलम्बन, सत्य, अहिंसा तथा देशप्रेम, स्वावलम्बन, सत्य, अहिंस सत्याचरण जैसे गुणों का विकास होना चाहिए। गांधी जी के विद्यार्थी संबंधी उपरोक्त विचारों को देखकर यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है आज के भटके हुए विद्यार्थियों को सही दिशा दिखाने के लिए गांधी जी के विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने कल थे।

आज की प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था पर यदि दृष्टि डाली जाए तो ज्ञात होता है कि इसमें व्यवसायिक शिक्षा का अभाव है। जबकि शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य जीविकोपार्जन का होता है। बेरोजगारी आज की ज्वलन्ना समस्या के रूप में सामने खड़ी है। बेरोजगारी से जुड़ाते हुए विद्यार्थी अन्याय अनैतिक तथा समाज विरोधी कार्यों में लिप्त हो जाते हैं जिसको गाधी जी की बुनियादी शिक्षा को अपनाकर रोका जा सकता है। गांधी जी द्वारा प्रतिपादित बुनियादी शिक्षा का मूलाधार मानव संस्कृति का निर्माण करना है। इसमें आधार मूल, बुनियादी एवं न्यूनतम किन्तुअनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की गई है और इस शिक्षा का आधार एक बेसिक क्राफ्ट या मूल दस्तकारी रखा गया है। इस प्रकार बुनियादी शिक्षा में बालक को स्वावलम्बी तथा जीविकोपार्जन के लिए तैयार करने पर बल दिया गया है। इस शिक्षा के पश्चात बालक किसी न किसी दस्तकारी में लग जाता है जिससे बेरोजगारी की समस्या समाप्त हो सकती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आज के बदलते परिवेश में रोजगारी की ज्वलन्त समस्या को दूर करने के लिए भी गांधी जी की बुनियादी शिक्षा की प्रासंगिकता है।

गांधी जी समाज के सभी व्यक्तियों का कल्याण चाहते थे। चाहे वो मजदूर, किसान हो या पूजीपति हो। पूरे समाज के विकास से ही राष्ट्र का सम्यक विकास सम्भव है। आज जहां साम्यवाद ने केवल सर्वहारा वर्ग के विकास की बात की और पूंजीवाद ने पूंजीपतियों की वहीं पर गांधी जी ने सर्वहित की बात कही। सर्वोदयी विचारधारा के अनुसार जहाँ पर निर्धन व्यक्ति आर्थिक रूप से दरिद्र है यहीं पर अमीर व्यक्ति नैतिक रूप से दरिद्र है। दोनो प्रकार की दरिद्रता को दूर करके ही समाज या राष्ट्र का सही अर्थों में विकास किया जा सकता है। इस प्रकार आज के बदलते परिवेश में गांधी जी के सर्वोदय दर्शन या समाज के सभी वर्गों के विकास से ही देश का विकास सम्भव है। इस दृष्टि से भी गांधी जी की प्रासंगिकता बरकरार है।

गांधी जी ने अपने शिक्षा दर्शन में रचनात्मक कार्यक्रम पर विशेष बल दिया था, जिसका मूल उद्देश्य था पूर्ण स्वराज्य जिसे सरल शब्दों में एक मानवीय समाज की रचना कह सकते हैं। गांधी जी का यह कार्यक्रम सुधार परिवर्तन के प्रत्येक पक्ष को अपने में समाहित किये हुए है। उनका मानना था कि हिंसा द्वेष के माध्यम से व्यवस्था परिवर्तन एवं सम्पत्ति वितरण आत्मघाती होगा क्योंकि हिंसा और शक्ति के बल पर प्रयोग की गई कोई भी वस्तु स्थायी नहीं हो सकती। जिसका उदाहरण रूस व चीन है। इन देशों में जो भी परिवर्तन हुए उससे मानवीय मनामृति तो बदली नही जा सकी। लालच और ईर्ष्यों बनी रही जिसका परिणाम यह हुआ कि रूसी गणराज्य बिखर गया और चीन आज बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगे नतमस्तक हो गया। वास्तव में गांधी जी के

अनुसार आर्थिक समानता के लिए व्यक्ति को सामाजिक आवश्यकता के अनुसार चलना होना न कि वैयक्तिक इच्छा और लालच के अनुसार इस दृष्टि से गांधी जी आज अत्यन्त प्रांसगिक हैं।

आज मशीनीकरण और आधुनिकीरण में व्यक्ति को व्यक्ति से दूर करके उसे मशीन बना दिया है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। आज भी भारत की अधिकांश जनता गावों में निवास करती है इसीलिए भारत को गायों का देश कहा जाता है। भारतीय जनसंख्या और साधनों को देखते हुए गांधी जी ने विशाल उद्योगों की बजाए कुटीर उद्योग–धन्धों को बढ़ावा देने पर बल दिया आज भी गांधी जी के इन विचारों की प्रांसगिकता है क्योंकि जहां बड़े–बड़े उद्योगों की एक इकाई में लाखों रुपयों के विनियोग से मात्र कुछ लोगों को रोजगार मिल सकता है वही पर इतनी डी पूंजी लघु कुटीर उद्योगों में लगा देने से इससे दस गुना ज्यादा लोगों को रोजगार दिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त लघु उद्योगों की स्थापना से महिला श्रम का भी सदुपयोग किया जा सकता है, जिसकी आज परम आवश्यकता है। भारतीय गांवों में आज की ज्वलन्त समस्या ग्रामीण बेरोजगारों का शहरों की ओर पलायन कर जाना है। इस चुनौती का सामना तब तक नहीं किया जा सकता जब हम अपनी अर्थव्यवस्था का मुंह गांवों की ओर नहीं करते। बढ़ती हुई जनसंख्या एवं बेरोजगारी के लिए छोटे–छोटे उद्योग ही कारगर सिद्ध हो सकते हैं। जिसमें आय और सम्पति का समान वितरण सुनिश्चित करके गाने में खुशहाली लायी जा सकती है। भारत के गांवों को आत्मनिर्भर बनाने तथा बेकारी एवं निर्धनता के दानयों से उनकी रक्षा के लिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था का गांधी जी का सुझाव व्यवहारिक भी है और प्रासंगिक भी। उनका सिद्धान्त रोटी का श्रम था जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं परिश्रम करके ईमानदारीपूर्वक जीविका का उपार्जन करना चाहिए। गांधी जी देश की आधारभूत आवश्यकताओं के प्रति सजग थे। उन्होंने इन आवश्यकताओं के प्रति सजग थे। उन्होंने इन आवश्यकताओं की पूर्ति और वर्गहीन समाज के निर्माण के लिए बेसिक शिक्षा प्रणाली का सूत्रपात किया जो निम्नलिखित सिद्धान्तों एवं उद्देश्यों पर आधारित थी।

गांधी जी का मन्तवय था कि जब तक बच्चे 14 वर्ष की अवस्था पूर्ण नहीं कर लेगें तब तक राज्य उनको निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का प्रयास करेगा। गांधी जी का ऐसा मानना था कि भारत की अधिकाश जनता अज्ञानता के अपकार से आवृत्त है। यही कारण है। कि उन्होंने बुनियादी शिक्षा का सर्वप्रथम सिद्धान्त जनसाधारण को शिक्षित बनाना निर्धारित किया। गांधी जी ने बुनियादी शिक्षा के आधारभूत सिद्धान्त की ओर संकेत करते हुए कहा, "सच्ची शिक्षा स्वावलम्बी बनाने वाली होनी चाहिए। इसका अभिप्राय यह है कि शिक्षा से पूंजी के अतिरिक्त वह सब धन मिल जाना चाहिए जो उसे प्राप्त करने में व्यय किया गया।"[3] गांधी जी के बुनियादी शिक्षा का एक अन्य मूलभूत यह था कि शिक्षा के द्वारा एक ऐसे समाज का निर्माण किया जाए जो स्वार्थ एवं शोषण विहीन हो, जो प्रेम एवं न्याय पर आधारित हो. और जिसका मूल मंत्र– सत्य एवं अहिंसा हो, यही कारण है कि बुनियादी विद्यालयों में बालकों में इसी प्रकार के समाज में रहने का प्रशिक्षण दिया जाता है। बुनियादी शिक्षा का माध्यम मातृभाषा रखा गया जिसके पीछे गांधी जी की मनोवैज्ञनिक सोच थी. उनका मानना था कि अपनी मातृभाषा को बालक जितनी आसानी और जल्दी से सीखता है उतना अंग्रेजी या किसी अन्य भाषा को नहीं सीख सकता और विदेशी भाषा से ज्ञान प्रदान करने में बालक का अन तथा समय दोनों का ही नुकसान होता है बुनियादी शिक्षा में हस्तशिल्प को केन्द्र मानकर शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गयी है। इसके पीछे गांधी जी का मन्तव्य था कि साक्षरता स्वयं शिक्षा नहीं है। बच्चे की शिक्षा उसे एक उपयोगी हस्तशिल्प सिखाकर और जिस समय वह अपनी शिक्षा आरंभ करता है उसी समय से उत्पादन करने के योग्य बनाकर आरम्भ की जानी चाहिए। बुनियादी शिक्षा का एक और महत्वपूर्ण सिद्धान्त शारीरिक श्रम पर आधारित है। जिसमें शारीरिक श्रम को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है। इस संदर्भ में गांधी जी का विचार था कि बालक में शरीर के अंगों का विवेकपूर्ण प्रयोग उनके मस्तिष्क को विकसित करने की सर्वोत्तम और शीघ्र विधि है।

भारत की नई पीढ़ी में महात्मा गांधी के विचारों के प्रति अविश्वास की भावना देखी जा रही है। तथा यह भी • सुनने को मिलता है कि बदलते परिवेश में अब उनके विचार प्रासंगिक नहीं रहे। वस्तुतः इसके लिए युवा पीढ़ी को ही दोषी नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि गांधी जी के विचारों का उतना प्रचार–प्रसार नहीं किया जा सका जितना वह अपरिहार्य, अपेक्षित एवं प्रासंगिक है। अतः आज के बदलते परिवेश में गांधी जी की प्रासंगिकता का अध्ययन करना एवं उनके शिक्षा– सिद्धान्तों को अपनाना कितना आवश्यक हो गया है, उसका अवलोकन करना ही हमारा उद्देश्य है। शिक्षा के सभी बिन्दुओं पर हम गांधी जी की प्रांसगिकता का मूल्यांकन करना आवश्यक समझते हैं। किसी समाज में शिक्षा, सृजन एवं शक्ति का पुंज होती है। यह समाजीकरण, सामाजिक नियन्त्रण, परिवर्तन, व्यक्तित्व निर्माण एवं मानव निर्माण के सृजन के महत्वपूर्ण उपादान और सामाजिक–आर्थिक विकास का सूचक होती है। वास्तव में सही अर्थ भी यही होता है परन्तु आज की शिक्षा का अर्थ येन–केन प्रकारेण संस्थानों में नामांकन एवं डिग्री प्राप्त करना हो गया है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था से न तो व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है और न ही राष्ट्र का। ऐसे परिवेश में महात्मा गांधी के शिक्षा संबंधी विचार आज भी अत्यन्त प्रासंगिक लगते हैं। महात्मा गांधी ने शिक्षा के अर्थ को स्पष्ट करते हुए कहा है कि–शिक्षा से मेरा तात्पर्य बालक या व्यक्ति के शरीर, मन तथा आत्मा के सर्वोत्कृष्ट एवं सर्वांगीण विकास से है। गांधी जी के शिक्षा संबंधी विचार आज भी अत्यन्त प्रासंगिक है जिसमें बालक के व्यक्तित्व के सर्वागीण विकास को स्वीकार किया गया है।

भारत एक प्रजातान्त्रिक देश है। प्रजातन्त्र की सफलता यहाँ के श्रेष्ठ नागरिकों पर निर्भर करती है। श्रेष्ठ नागरिकों का निर्माण करना शिक्षा का सर्वप्रथम उद्देश्य होना चाहिए। क्या वर्तमान में शिक्षा के उद्देश्य ऐसे नागरिक का निर्माण करने में सक्षम है? वर्तमान परिवेश को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी शिक्षा के कोई उद्देश्य ही नहीं हैं। व्यक्ति के चरित्रिक एवं नैतिक गुणों का निरन्तर ह्रास हो रहा है। भ्रष्टाचार, अन्याय, बेरोजगारी दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। ऐसी स्थिति को रोकने के लिए गांधी जी द्वारा बताए गए शैक्षिक सिद्धान्तों जैसे– बालक का सर्वांगीण विकास करना, राष्ट्रीयता की उच्च भावना का विकास करना, भारतीय संस्कृति को विकसित करना, शोषणरहित समाज की स्थापना करना, सत्य, अहिंसा एवं सद्भावना को व्यक्ति में

विकसित करना, स्वज्ञान तथा आत्मज्ञान की प्राप्ति करना, हस्तकौशल द्वारा जीवन की प्रारम्भिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता उत्पन्न करना, आत्मनिर्भर बनाना, सामाजिक वर्ग भेद का उन्मूलन कर प्रेम एवं सहयोग पर आधारित जन – तन्त्र पद्धति को सफल बनाना, क्रिया प्रधान शिक्षण के माध्यम से श्रम के महत्व को समझाना, विद्यालय, घर एवं समाज के जीवन में सामंजस्य स्थापित करना आदि को अपनाकर ही हम बदलते परिवेश की चुनौतियों का समाधान कर सकते हैं।

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था के पाठ्यक्रम पर भी यदि दृष्टिपात किया जाए तो उसमें पर्याप्त दोष दिखाई देते हैं। पाठ्यक्रम उन सभी क्रियाकलापों का समूह होता है जिसे विद्यार्थी तथा शिक्षक एक साथ मिलकर उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आयोजित करते हैं। परन्तु वर्तमान शिक्षा के पाठ्यक्रम अव्यवहारिक तथा बस्तों के बोझ को बढ़ाने वाले अधिक दिखाई देते हैं अपेक्षाकृत श्रेष्ठ नागरिकों के निर्माण के। आज की बढ़ती हुई बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, बेईमानी, अनैतिकता के लिए कहीं न कहीं हमारे पाठ्यक्रम भी दोषी हैं। वर्तमान पाठ्यक्रम अत्यन्त कठोर होने के नाते पुस्तकीय ज्ञान एवं रटने पर बल देते हैं, जिससे बालकों की मौलिकता तो समाप्त होती रही है, साथ ही साथ उनका सर्वांगीण विकास भी नहीं हो पता। गांधी जी पाठ्यपुस्तकों की अधिकता के सर्वथा विरोधी थे उनका मानना था कि बालक की वास्तविक पाठ्यपुस्तक तो उसका अध्यापक होता है। इसी संबंध में गांधी जी लिखते है कि, "अगर मैं शिक्षकों को समझा सकूं तो पाठ्यपुस्तकें केवल अध्यापकों के लिए ही रखूँ ।" उनका मानना था कि बालकों को बचपन से ही पाठ्यपुस्तकों का गुलाम बनाकर उन पर अनावश्यक पुस्तकों को खरीदने का बेकार बोझ बढ़ाया जाता है और अत्यधिक पाठ्यपुस्तकों के बोझ से बालकों की मौलिकता समाप्त हो जाती है। गांधी जी के पाठ्यपुस्तक संबंधी विचार आज के बदलते परिवेश में अत्यन्त ही प्रासंगिक लगते हैं क्योंकि हम शुरू से ही बच्चों को अनावश्यक दबाव में रखकर उनकी स्वतन्त्र सोच, सर्वांगीण विकास और मौलिकता को समाप्त कर देते हैं। गांधी जी का मंतव्य था कि प्राथमिक कक्षाओं से ही बालकों को कुछ ऐसी चीजें सिखायी जाएं जिससे वे कुशलता प्राप्त करें तथा जो उनके मनोनुकूल हो। इसी आधार पर उन्होंने पाठ्यक्रम क्राफ्ट शिक्षा को स्थान दिया। क्राफ्ट शिक्षा लेकर विद्यार्थी उच्च माध्यमिक स्तर पर जाएगा जहाँ से जीवन की धारा का निर्माण होता है, उसके लिए बहुत उपयोगी साबित होगी। इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर क्राफ्ट शिक्षा को पाठ्यक्रम में रखा गया। उन्होंने यह प्रावधान किया कि हमारे नौनिहालों के हाथों, जो मोटे और भद्दे सामान बनेंगे उसको समाज एवं सरकार अधिकतम मूल्य देकर क्रय करेंगे, इस गर्व के साथ, कि हमारे बालकों ने यह सामान बनाया है। लेकिन इसका उल्टा हुआ, हमारा समाज गाँधी जी के विचारों का अर्थ नहीं समझ सका आज एक बार फिर गांधी जी की ही बातों को व्यावहारिक शिक्षा नाम देकर भारतीय सरकार इसे लागू करने का प्रयास कर रही है ।

आज हम अगर शिक्षण विधियों पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि अधिकाशतः शिक्षण कार्यों में व्याख्यान विधि का ही प्रयोग होता है जिसमें छात्र श्रोता और शिक्षक वक्ता होता है। छात्र निष्क्रिय होकर शिक्षक की बातों को सुन लेता है तथा शिक्षक भी कक्षा कक्ष में वक्तव्य देकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेता है। उपर्युक्त प्रचलित शिक्षण विधि से शिक्षण अप्रभावी हो जाता है जिससे छात्रों का अधिगम स्तर उच्च होने के बजाए उनमें विषयवस्तु को रटने एवं प्रत्याशित उत्तरों को याद कर लेने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। आज की इस अप्रभावी शिक्षण विधि का समाधान करने के लिए निःसंदेह महात्मा गांधी की क्रिया – प्रधान शिक्षण विधि को अपनाना प्रासंगिक होगा। महात्मा गांधी ने अपनी शिक्षण – विधि को मनोवैज्ञानिक आधारों पर विकसित किया था। गांधी जी के अनुसार 'करके सीखना' एवं 'स्वयं अनुभव करके सीखना ही उत्तम सीखना होता है। गांधी जी रचनात्मक विधि, खेल–खेल में सीखना, अनुभव विधि द्वारा शिक्षण, अनुकरण विधि द्वारा शिक्षण, सह–संबंध द्वारा शिक्षण, स्वाध्याय, चिन्तन, मनन आदि शिक्षण विधियों के पक्षधर थे। जो आज भी बालकों के सर्वांगीण विकास में सहायक हैं तथा इन विधियों को अपनाने में आज भी गांधी जी के विचारों की प्रासंगिकता बनी हुयी है।

अध्ययन के उद्देश्य

गांधी जी ने बुनियादी शिक्षा को निम्नलिखित उद्देश्यो पर स्थापित किया। बुनियादी शिक्षा के आर्थिक उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए गांधी जी ने लिखा है कि प्रत्येक बालका और बालिका को विद्यालय छोड़ने के पश्चात् किसी व्यवसाय में लगाकर उसे स्वावलम्बी बनाना चाहिए। आधुनिक भारतीय समाज में बालकों का निरंतर नैतिक पतन हो रहा है। अत बुनियादी शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य है–बालक का नैतिक विकास करना। इस सन्दर्भ में गांधी जी ने लिखा है कि "मैंने हृदय की संस्कृति या चारित्रिक निर्माण को सर्वोत्तम स्थान दिया है। मुझे विश्वास है कि नैतिक प्रशिक्षण सबको समान रूप से दिया जा सकता है। इस बात से कोई प्रयोजन नहीं है कि उनकी आयु और पालन–पोषण में कितना अन्तर है।"[4] गांधी जी का मानना था कि हमारी शिक्षा प्रणाली का एक प्रत्यक्ष दोष यह है कि उसमें भारतीय संस्कृति का ज्ञान न कराकर चालकों को पाश्वात्य आदर्शों और विचारों का भक्त बनाया जाता है. जिसके फलस्वरूप वे अपनी परम्परागत संस्कृति से पूर्णतया अनभिज्ञ रहते हैं। इसलिए बालकों को भारतीय परम्परा एवं संस्कृति का ज्ञान अवश्य प्रदान किया जाए।

" गांधी जी की दुनियादी शिक्षा द्वारा बालकों में श्रेष्ठ नागरिकता के गुणों को विकसित करने पर बल दिया जाता है। जनतन्त्रीय शासन प्रणाली में प्रत्येक व्यक्ति शासन के प्रति उत्तरदायी होता है और राज्य के प्रति उसके कर्तव्यों में वृद्धि हो जाती है किन्तु उसके साथ–साथ उसे अनेक अधिकार भी प्राप्त हो जाते है। बालक इन कर्तव्यों का पालन तथा अधिकारों का उपयोग तभी कर सकता है, जब वह उनके प्रति सजग हो इसके लिए ऐसी शिक्षा आवश्यक हैं जो उसमें नागरिकता के गुणों के विकास में योगदान देती है। भारत की वर्तमान शिक्षा पद्धति में केवल बालक को मानसिक विकास पर बल दिया जाता है जिसमें बालक के शारीरिक और आध्यात्मिक विकास के प्रति रंचमात्र भी ध्यान नहीं दिया जाता। इस प्रकार बालक का केवल एकानी विकास होता है जबकि बुनियादी शिक्षा में बालक के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास के प्रति पूर्णरूपेण व्यान दिया जाता है। आज का समाज स्पष्ट रूप से दो वर्गों में विभक्त है धनदान एवं धनहीन ये दोनों ही मर्ग विकृत है। पहला धन की प्रचुरता के कारण

और दूसरा पन के अभाव के कारण बुनियादी शिक्षा का एक मुख्य उद्देश्य इस विकृत समाज के स्थान पर सर्वोदय समाज की स्थापना करना है जिसमें समाज के सभी वर्गों का उदय हो सके।

बुनियादी शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए गांधी जी ने क्रियाप्रधान पाठ्यचर्या का निर्माण किया था जिसमें हस्तकौशल एवं उद्योग के अन्तर्गत कलाई, बुनाई, बागवानी, कृषि, काष्ठकला, धर्म कार्य पुस्तक फला, मिट्टी का काम मछली पालन, गृह विज्ञान आदि विषयों का समावेश किया। इसके साथ ही साथ उन्होंने पाठ्यक्रम में मातृभाषा, व्यवहारिक गणित, सामाजिक विषय, सामान्य विज्ञान, संगीत, चित्रकला, स्वास्थ्य विज्ञान, आचरण शिक्षा आदि पर विशेष बल दिया।

शोध विधि

वर्तमान शोध समस्या के अन्तर्गत वर्णित दार्शनिक शोध विधि का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध अध्ययन सैद्धान्तिक एवं दर्शानिक प्रकृति का है। इसके अन्तर्गत महात्मा गांधी जी के विचार एवं शिक्षा दर्शन की वास्तविकता को लिया गया है।

आलोचनात्मक समीक्षा

गांधी जी स्त्री शिक्षा के भी पक्षधर रहे। वैसे तो उनका मानना था कि स्त्री का प्रमुख कार्य क्षेत्र घर पर ही होता है, परन्तु घर का सुचारू रूप से संचालन एवं सन्तान का पालन पोषण एक सुशिक्षित महिला ही कर सकती है। उस जन विषयों की शिक्षा अवश्य ही जानी चाहिए जिससे यह स्वयं के अपने परिवार के तथा अपने बच्चों के जीवन को सुखी बना सके, हालाकि ये भी मानते थे कि शुरु स्त्री तथा पुरुष को एक साथ शिक्षा दी जा सकती है परन्तु यौवनावस्था में ये सह–शिक्षा के खिलाफ थे। स्त्री शिक्षा के पाठ्यक्रम में उन्होंने गृहविज्ञान, साहित्य, कला, बाल मनोविज्ञान आदि पर बल दिया है। उनका विचार था स्त्रियों को नृत्य एवं संगीत की शिक्षा से दूर रखा जाना चाहिए। प्रौढ शिक्षा के संबंध में गांधी जी का विचार था कि वयस्कों को अक्षर ज्ञान देने के बजाए इस बात पर बल दिया जाए कि शिक्षा द्वारा उनकी अज्ञानता दूर हो सके। गांधी जी यह मानते थे कि "मेरे विचार में दुःखी होने का तथा शर्म करने का कारण निरक्षरता नहीं वरन अज्ञानता है।" इसीलिए यह प्रौढ़ शिक्षा के लिए ऐसा पाठ्यक्रम चाहते ये जो उनकी अज्ञानता को दूर तो करे ही, साथ ही साथ उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में भी मदद करें।

धार्मिक शिक्षा के संबंध में गांधी जी के विचार अलग थे। उनका मानना था कि धर्म का तात्पर्य सत्य एवं अहिंसा है। यह धर्म शिक्षा का यह अर्थ कदापि नहीं बताते थे कि पाठ्यक्रम में हिन्दू धर्म को निहित किया जाए। उनका विचार था कि वर्म शिक्षा को विभिन्न धर्मों के समन्वय के रूप में प्रस्तुत किया जाना चाहिए जिससे विद्यार्थियों में श्रद्धा सहिष्णुता, प्रेम, त्याग, सहानुभूति अपनत्य नैतिक मूल्यों को समाहित किया जा सके।

गांधी जी ब्रिटिश काल की शिक्षा व्यवस्था से मुख थे थें चूंकि यह शिक्षा पश्चात्य संस्कृति एवं आवश्यकताओं के अनुकूल थी। उन्होंने कहा कि यदि हम शिक्षा द्वारा वांछित को भारतीयता पर आधारित बनाना होगा। शिक्षा का उद्देश्य सिर्फ बौद्धिक विकास करना ही नहीं वरन उसके द्वारा उन भावनाओं व संवेगों का विकास भी किया जाना है जो भारतीय जन–मानस के हृदय को उद्वेलित कर सके उनमें अपनत्व का बीज बो सके। यदि हम शिक्षा को सफल बनाना चाहते है तो हमें शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषा को बनाना होगा और साथ ही ऐसी शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी जो भारतीय गांव के उद्योगों एवं व्यवसायों के अनुकूल हो। इसी आधार पर उन्होंने 1921 में राष्ट्रीय शिक्षा की घोषणा की। उन्होंने कहा कि शिक्षा का लक्ष्य अहिंसात्मक क्रांति होना चाहिए जिससे नवभारत का निर्माण किया जा सके और प्रत्येक व्यक्ति आत्म–निर्भर बन सके।

निष्कर्ष

यदि गांधी जी के शिक्षा दर्शन का मूल्यांकन करें तो हम यह निःसंकोच कह सकते हैं कि आज के बदलते परिवेश में गांधी जी के शिक्षा–दर्शन की अत्याधिक प्रासंगिकता है। वे शिक्षा के सैद्धान्तिक पक्ष से कभी भी सहमत नहीं थे। इसी कारण शिक्षा दर्शन के रूप में उन्होंने शिक्षा का गत्यात्मक रूप प्रस्तुत किया। गांधी जी ने टॉलस्टॉय फार्म, फोनिक्स स्टेट साबरमती में नए प्रयोग किये एवं शिक्षा को हाथ, हृदय व मस्तिष्क की विभिन्न क्रियाओं के द्वारा समन्वित करने की योजना प्रस्तुत की ये शिक्षा के द्वारा एक सम्पूर्ण मानव के विकास की कल्पना करते थे। शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने महत्वपूर्ण स्थान इस बात का भी दिया कि शिक्षा को देश की विद्यमान आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों के अनुकूल होना चाहिए। उन्होंने एक ऐसी शिक्षा की परिकल्पना की जो समस्त भारतीयों को एकता के सूत्र में बांध सके।

सुझाव

गांधी जी ने शिक्षा को एक ऐसे माध्यम के रूप में देखा था जो सामाजिक व्यवस्था में व्याप्त अन्याय हिंसा प असमानता के प्रति राष्ट्र की अंतरात्मा को जगा सके। बच्चे को रूपांतरित होते सामाजिक परिदृश्य का एक अंग बनाने के लिए बच्चे के आस–पास के पर्यावरण, जिसमें मातृभाषा एवं कार्य भी आते हैं का एक साधन के रूप में उपयोग किया जाए। उन्होंने ऐसे भारत का सपना देखा था जिसमें प्रत्येक बालक अपनी योग्यता संभावनाओं की तलाश कर सके और दूसरों के साथ विश्व के पुनर्निर्माण के लिए काम कर सके, एक ऐसा विश्व जिसमें आज भी राष्ट्रों के बीच समाज के भीतर तथा मानवता व प्रकृति के बीच संघर्ष बरकरार है। स्वंतत्रता संग्राम के दौरान अभिव्यक्त शिक्षा संबंधी सरोकारों को स्वतंत्रता के बाद, राष्ट्रीय आयोगों द्वारा मुखरित किया गया।

संदर्भ

1. गांधी, मो. क. 1980 सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली।
2. गांधी, मो. क. 1970 बुनियादी शिक्षा, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद।
3. प्रतियोगिता दर्पण तथा योजना 2000 2002 मासिक पत्रिका।
4. उदयमान भारतीय समाज ने शिक्षक, एन. आर. स्वरूप सक्सेना, पृष्ठ संख्या 326